

राज्य सभा - एक परिचय

पृष्ठभूमि

काउंसिल ऑफ स्टेट्स, जिसे राज्य सभा भी कहा जाता है, एक ऐसा नाम है जिसकी घोषणा सभापीठ द्वारा सभा में 23 अगस्त, 1954 को की गई थी। इसकी अपनी खास विशेषताएं हैं। भारत में द्वितीय सदन का प्रारम्भ 1918 के मोन्टेग-चेम्सफोर्ड प्रतिवेदन से हुआ। भारत सरकार अधिनियम, 1919 में तत्कालीन विधानमंडल के द्वितीय सदन के तौर पर काउंसिल ऑफ स्टेट्स का सृजन करने का उपबंध किया गया जिसका विशेषाधिकार सीमित था और जो वस्तुतः 1921 में अस्तित्व में आया। गवर्नर-जनरल तत्कालीन काउंसिल ऑफ स्टेट्स का पदेन अध्यक्ष होता था। भारत सरकार अधिनियम, 1935 के माध्यम से इसके गठन में शायद ही कोई परिवर्तन किए गए।

संविधान सभा, जिसकी पहली बैठक 9 दिसम्बर 1946 को हुई थी, ने भी 1950 तक केन्द्रीय विधानमंडल के रूप में कार्य किया, फिर इसे 'अन्तिम संसद' के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। इस अवधि के दौरान, केन्द्रीय विधानमंडल जिसे 'संविधान सभा' (विधायी) और आगे चलकर 'अन्तिम संसद' कहा गया, 1952 में पहले चुनाव कराए जाने तक, एक-सदनी रहा।

स्वतंत्र भारत में द्वितीय सदन की उपयोगिता अथवा अनुपयोगिता के संबंध में संविधान सभा में विस्तृत बहस हुई और अन्ततः स्वतंत्र भारत के लिए एक द्विसदनी विधानमंडल बनाने का निर्णय मुख्य रूप से इसलिए किया गया क्योंकि परिसंघीय प्रणाली को अपार विविधताओं वाले इतने विशाल देश के लिए सर्वाधिक सहज स्वरूप की सरकार माना गया। वस्तुतः, एक प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित एकल सभा को स्वतंत्र भारत के समक्ष आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए अपर्याप्त समझा गया। अतः, 'काउंसिल ऑफ स्टेट्स' के रूप में ज्ञात एक ऐसे द्वितीय सदन का सृजन किया गया जिसकी संरचना और निर्वाचन पद्धति प्रत्यक्षतः निर्वाचित लोक सभा से पूर्णतः भिन्न थी। इसे एक ऐसा अन्य सदन समझा गया, जिसकी सदस्य संख्या लोक सभा (हाउस ऑफ पीपुल) से कम है। इसका आशय परिसंघीय सदन अर्थात् एक ऐसी सभा से था जिसका निर्वाचन राज्यों और दो संघ राज्य क्षेत्रों की सभाओं के निर्वाचित सदस्यों द्वारा किया गया, जिनमें राज्यों को समान प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया। निर्वाचित सदस्यों के अलावा, राष्ट्रपति द्वारा सभा के लिए बारह सदस्यों के नामनिर्देशन का भी उपबंध किया गया। इसकी सदस्यता हेतु न्यूनतम आयु तीस वर्ष नियत की गई जबकि निचले सदन के लिए यह पच्चीस वर्ष है। काउंसिल ऑफ स्टेट्स की सभा में गरिमा और प्रतिष्ठा के अवयव संयोजित किए गए। ऐसा भारत के उपराष्ट्रपति को राज्य सभा का पदेन सभापति बनाकर किया गया, जो इसकी बैठकों का सभापतित्व करते हैं।

राज्य सभा से संबंधित संवैधानिक उपबंध संरचना/संख्या

संविधान के अनुच्छेद 80 में राज्य सभा के सदस्यों की अधिकतम संख्या 250 निर्धारित की गई है, जिनमें से 12 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा नामनिर्देशित किए जाते हैं और 238 सदस्य राज्यों के और संघ राज्य क्षेत्रों के प्रतिनिधि होते हैं। तथापि, राज्य सभा के सदस्यों की वर्तमान संख्या 245 है, जिनमें से 233 सदस्य राज्यों और संघ राज्यक्षेत्र दिल्ली तथा पुडुचेरी के प्रतिनिधि हैं और 12 राष्ट्रपति द्वारा नामनिर्देशित हैं। राष्ट्रपति द्वारा नामनिर्देशित किए जाने वाले सदस्य ऐसे व्यक्ति होंगे जिन्हें साहित्य, विज्ञान, कला और समाज सेवा जैसे विषयों के संबंध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है।

स्थानों का आवंटन

संविधान की चौथी अनुसूची में राज्य सभा में राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों को स्थानों के आवंटन का उपबंध है। स्थानों का आवंटन प्रत्येक राज्य की जनसंख्या के आधार पर किया जाता है। राज्यों के पुनर्गठन तथा नए राज्यों के गठन के परिणामस्वरूप, राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों को आवंटित राज्य सभा में निर्वाचित स्थानों की संख्या वर्ष 1952 से लेकर अब तक समय-समय पर बदलती रही है।

पात्रता अर्हताएं

संविधान के अनुच्छेद 84 में संसद की सदस्यता के लिए अर्हताएं निर्धारित की गई हैं। राज्य सभा की सदस्यता के लिए अर्ह होने के लिए किसी व्यक्ति के पास निम्नलिखित अर्हताएं होनी चाहिए:

- (क) उसे भारत का नागरिक होना चाहिए और निर्वाचन आयोग द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार शपथ लेना चाहिए या प्रतिज्ञान करना चाहिए और उस पर अपने हस्ताक्षर करने चाहिए;
- (ख) उसे कम से कम तीस वर्ष की आयु का होना चाहिए;
- (ग) उसके पास ऐसी अन्य अर्हताएं होनी चाहिए जो संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस निमित्त विहित की जाएं।

निरर्हताएं

संविधान के अनुच्छेद 102 में यह निर्धारित किया गया है कि कोई व्यक्ति संसद के किसी सदन का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य होने के लिए

निरर्हित

होगा-

- (क) यदि वह भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन, ऐसे पद को छोड़कर, जिसको धारण करने वाले का निरर्हित न होना संसद ने विधि द्वारा घोषित किया है, कोई लाभ का पद धारण करता है;
- (ख) यदि वह विकृतचित है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घोषणा विद्यमान है;
- (ग) यदि वह अनुन्मोचित दिवालिया है;
- (घ) यदि वह भारत का नागरिक नहीं है या उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित कर ली है या वह किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा या अनुषक्ति को अभिस्वीकार किए हुए है;
- (ड.) यदि वह संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निरर्हित कर दिया जाता है।

स्पष्टीकरण-

इस खंड के प्रयोजनों के लिए, कोई व्यक्ति केवल इस कारण भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन लाभ का पद धारण करने वाला नहीं समझा जाएगा कि वह संघ का या ऐसे राज्य का मंत्री है।

इसके अतिरिक्त, संविधान की दसवीं अनुसूची में दल-परिवर्तन के आधार पर सदस्यों की निरर्हता के बारे में उपबंध किया गया है। दसवीं अनुसूची के उपबंधों के अनुसार, कोई सदस्य एक सदस्य के रूप में उस दशा में निरर्हित होगा, यदि वह स्वेच्छा से अपने राजनीतिक दल की सदस्यता छोड़ देता है; या वह ऐसे राजनीतिक दल द्वारा, जिसका वह सदस्य है, दिए गए किसी निदेश के विरुद्ध सदन में मतदान करता है या मतदान करने से विरत रहता है और ऐसे मतदान या मतदान करने से विरत रहने को उस राजनीतिक दल द्वारा पन्द्रह दिन के भीतर माफ नहीं किया गया है। निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में निर्वाचित सदस्य निरर्हित होगा यदि वह अपने निर्वाचन के पश्चात् किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो जाता है।

तथापि, राष्ट्रपति द्वारा सदन के किसी नामनिर्देशित सदस्य को किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित होने की अनुमति होगी यदि वह सदन में अपना स्थान ग्रहण करने के पहले छह मास के भीतर ऐसा करता/करती है।

किसी सदस्य को इस आधार पर निरर्हित नहीं किया जाएगा यदि वह राज्य सभा का उप-सभापति निर्वाचित होने के पश्चात् अपने राजनीतिक दल की सदस्यता स्वेच्छा से छोड़ देता/देती है।

निर्वाचन/नामनिर्देशन की प्रक्रिया निर्वाचक मंडल

राज्य सभा में राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों के प्रतिनिधियों का निर्वाचन अप्रत्यक्ष निर्वाचन पद्धति द्वारा किया जाता है। प्रत्येक राज्य तथा दो संघ राज्य क्षेत्रों के प्रतिनिधियों का निर्वाचन उस राज्य की विधान सभा के निर्वाचित सदस्यों तथा उस संघ राज्य क्षेत्र के निर्वाचक मंडल के सदस्यों, जैसा भी मामला हो, द्वारा एकल संक्रमणीय मत द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के अनुसार किया जाता है। दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के निर्वाचक मंडल में दिल्ली विधान सभा के निर्वाचित सदस्य और पुडुचेरी संघ राज्य क्षेत्र के निर्वाचक मंडल में पुडुचेरी विधान सभा के निर्वाचित सदस्य शामिल हैं।

द्वि-वार्षिक/उप-चुनाव

राज्य सभा एक स्थायी सदन है और यह भंग नहीं होता। तथापि, प्रत्येक दो वर्ष बाद राज्य सभा के एक-तिहाई सदस्य सेवा-निवृत्त हो जाते हैं। पूर्णकालिक अवधि के लिए निर्वाचित सदस्य छह वर्षों की अवधि के लिए कार्य करता है। किसी सदस्य के कार्यकाल की समाप्ति पर सेवानिवृत्ति को छोड़कर अन्यथा उत्पन्न हुई रिक्ति को भरने के लिए कराया गया निर्वाचन 'उप-चुनाव' कहलाता है।

उप-चुनाव में निर्वाचित कोई सदस्य उस सदस्य की शेष कार्यवाधि तक सदस्य बना रह सकता है जिसने त्यागपत्र दे दिया था या जिसकी मृत्यु हो गई थी या जो दसवीं अनुसूची के अधीन सभा का सदस्य होने के लिए निरहित हो गया था।

पीठासीन अधिकारीगण-सभापति और उपसभापति

राज्य सभा के पीठासीन अधिकारियों की यह जिम्मेदारी होती है कि वे सभा की कार्यवाही का संचालन करें। भारत के उपराष्ट्रपति राज्य सभा के पदेन सभापति हैं। राज्य सभा अपने सदस्यों में से एक उपसभापति का भी चयन करती है। राज्य सभा में उपसभाध्यक्षों का एक पैनल भी होता है, जिसके सदस्यों का नामनिर्देशन सभापति, राज्य सभा द्वारा किया जाता है। सभापति और उपसभापति की अनुपस्थिति में, उपसभाध्यक्षों के पैनल से एक सदस्य सभा की कार्यवाही का सभापतित्व करता है।

महासचिव

महासचिव की नियुक्ति राज्य सभा के सभापति द्वारा की जाती है और उनका रैंक संघ के सर्वोच्च सिविल सेवक के समतुल्य होता है। महासचिव गुमनाम रह कर कार्य करते हैं और संसदीय मामलों पर सलाह देने के लिए तत्परता से पीठासीन अधिकारियों को उपलब्ध रहते हैं। महासचिव राज्य सभा सचिवालय के प्रशासनिक प्रमुख और सभा के अभिलेखों के संरक्षक भी हैं। वह राज्य सभा के सभापति के निदेश व नियंत्रणाधीन कार्य करते हैं।

दोनों सभाओं के बीच संबंध

संविधान के अनुच्छेद 75 (3) के अधीन, मंत्री परिषद् सामूहिक रूप से लोक सभा के प्रति जिम्मेदार होती है जिसका आशय यह है कि राज्य सभा सरकार को बना या गिरा नहीं सकती है। तथापि, यह सरकार पर नियंत्रण रख सकती है और यह कार्य विशेष रूप से उस समय बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है जब सरकार को राज्य सभा में बहुमत प्राप्त नहीं होता है।

किसी सामान्य विधान की दशा में, दोनों सभाओं के बीच गतिरोध दूर करने के लिए, संविधान में दोनों सभाओं की संयुक्त बैठक बुलाने का उपबंध है। वस्तुतः, अतीत में ऐसे तीन अवसर आए हैं जब संसद की सभाओं की उनके बीच मतभेदों को सुलझाने के लिए संयुक्त बैठक हुई थी।

संयुक्त बैठक में उठाये जाने वाले मुद्दों का निर्णय दोनों सभाओं में उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की कुल संख्या के बहुमत से किया जाता है। संयुक्त बैठक संसद भवन के केन्द्रीय कक्ष में आयोजित की जाती है जिसकी अध्यक्षता लोकसभाध्यक्ष द्वारा की जाती है। तथापि, धन विधेयक की दशा में, संविधान में दोनों सभाओं की संयुक्त बैठक बुलाने का कोई उपबंध नहीं है, क्योंकि लोक सभा को वित्तीय मामलों में राज्य सभा की तुलना में प्रमुखता हासिल है। संविधान संशोधन विधेयक के संबंध में, संविधान में यह उपबंध किया गया है कि ऐसे विधेयक को दोनों सभाओं द्वारा, संविधान के अनुच्छेद 368 के अधीन विहित रूप में, विशिष्ट बहुमत से पारित किया जाना होता है। अतः, संविधान संशोधन विधेयक के संबंध में दोनों सभाओं के बीच गतिरोध को दूर करने का कोई उपबंध नहीं है।

मंत्री संसद की किसी भी सभा से हो सकते हैं। इस संबंध में संविधान सभाओं के बीच कोई भेद नहीं करता है। प्रत्येक मंत्री को किसी भी सभा में बोलने और उसकी कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार होता है, लेकिन वह उसी सभा में मत देने का हकदार होता है जिसका वह सदस्य होता है।

इसी प्रकार, संसद की सभाओं, उनके सदस्यों और उनकी समितियों की शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के संबंध में, दोनों सभाओं को संविधान द्वारा बिल्कुल समान धरातल पर रखा गया है।

जिन अन्य महत्वपूर्ण विषयों के संबंध में दोनों सभाओं को समान शक्तियां प्राप्त हैं वे इस प्रकार हैं:- राष्ट्रपति का निर्वाचन तथा महाभियोग, उपराष्ट्रपति का निर्वाचन, आपातकाल की उद्घोषणा का अनुमोदन, राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता से संबंधित उद्घोषणा और वित्तीय आपातकाल। विभिन्न संवैधानिक प्राधिकरणों आदि से प्रतिवेदन तथा पत्र प्राप्त करने के संबंध में, दोनों सभाओं को समान शक्तियां प्राप्त हैं।

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि मंत्री-परिषद् की सामूहिक जिम्मेदारी के मामले और कुछ ऐसे वित्तीय मामले, जो सिर्फ लोक सभा के क्षेत्राधिकार में आते हैं, के सिवाए दोनों सभाओं को समान शक्तियां प्राप्त हैं।

राज्य सभा की विशेष शक्तिया

एक परिसंघीय सदन होने के नाते राज्य सभा को संविधान के अधीन कुछ विशेष शक्तियां प्राप्त हैं। विधान से संबंधित सभी विषयों/क्षेत्रों को तीन सूचियों में विभाजित किया गया है-संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची। संघ और राज्य सूचियां परस्पर अपवर्जित हैं-कोई भी दूसरे के क्षेत्र में रखे गए विषय पर कानून नहीं बना सकता।

तथापि, यदि राज्य सभा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत द्वारा यह कहते हुए एक संकल्प पारित करती है कि यह "राष्ट्रीय हित में आवश्यक या समीचीन" है कि संसद, राज्य सूची में प्रमाणित किसी विषय पर विधि बनाए, तो संसद भारत के संपूर्ण राज्य-क्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए उस संकल्प में विनिर्दिष्ट विषय पर विधि बनाने हेतु अधिकार-संपन्न हो जाती है। ऐसा संकल्प अधिकतम एक वर्ष की अवधि के लिए प्रवृत्त रहेगा परन्तु यह अवधि इसी प्रकार के संकल्प को पारित करके एक वर्ष के लिए पुनः बढ़ायी जा सकती है।

यदि राज्य सभा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत द्वारा यह घोषित करते हुए एक संकल्प पारित करती है कि संघ और राज्यों के लिए सम्मिलित एक या अधिक अखिल भारतीय सेवाओं का सृजन किया जाना राष्ट्रीय हित में आवश्यक या समीचीन है, तो संसद विधि द्वारा ऐसी सेवाओं का सृजन करने के लिए अधिकार-संपन्न हो जाती है।

संविधान के अधीन, राष्ट्रपति को राष्ट्रीय आपात की स्थिति में, किसी राज्य में संवैधानिक तंत्र के विफल हो जाने की स्थिति में अथवा वित्तीय आपात की स्थिति में उद्घोषणा जारी करने का अधिकार है। ऐसी प्रत्येक उद्घोषणा को संसद की दोनों सभाओं द्वारा नियत अवधि के भीतर अनुमोदित किया जाना अनिवार्य है। तथापि, कतिपय परिस्थितियों में राज्य सभा के पास इस संबंध में विशेष शक्तियां हैं। यदि कोई उद्घोषणा उस

समय की जाती है जब लोक सभा का विघटन हो गया है अथवा लोक सभा का विघटन इसके अनुमोदन के लिए अनुज्ञात अवधि के भीतर हो जाता है और यदि इसे अनुमोदित करने वाला संकल्प राज्य सभा द्वारा अनुच्छेद 352, 356 और 360 के अधीन संविधान में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर पारित कर दिया जाता है, तब वह उद्घोषणा प्रभावी रहेगी।

वित्तीय मामलों में राज्य सभा

धन विधेयक केवल लोक सभा में पुरःस्थापित किया जा सकता है। इसके उस सभा द्वारा पारित किए जाने के उपरान्त इसे राज्य सभा को उसकी सहमति अथवा सिफारिश के लिए पारेषित किया जाता है। ऐसे विधेयक के संबंध में राज्य सभा की शक्ति सीमित है। राज्य सभा को ऐसे विधेयक की प्राप्ति से चौदह दिन के भीतर उसे लोक सभा को लौटाना पड़ता है। यदि यह उस अवधि के भीतर लोक सभा को नहीं लौटाया जाता है तो विधेयक को उक्त अवधि की समाप्ति पर दोनों सदनों द्वारा उस रूप में पारित किया गया समझा जाएगा जिसमें इसे लोक सभा द्वारा पारित किया गया था। राज्य सभा धन विधेयक में संशोधन भी नहीं कर सकती; यह केवल संशोधनों की सिफारिश कर सकती है और लोक सभा, राज्य सभा की सभी या किन्हीं सिफारिशों को स्वीकार अथवा अस्वीकार कर सकेगी।

धन विधेयक के अलावा, वित्त विधेयकों की कतिपय अन्य श्रेणियों को भी राज्य सभा में पुरःस्थापित नहीं किया जा सकता। तथापि, कुछ अन्य प्रकार के वित्त विधेयक हैं जिनके संबंध में राज्य सभा की शक्तियों पर कोई निर्बंधन नहीं है। ये विधेयक किसी भी सभा में प्रस्तुत किए जा सकते हैं और राज्य सभा को ऐसे वित्त विधेयकों को किसी अन्य विधेयक की तरह ही अस्वीकृत या संशोधित करने का अधिकार है। वस्तुतः ऐसे विधेयक संसद की किसी भी सभा द्वारा तब तक पारित नहीं किए जा सकते, जब तक राष्ट्रपति ने उस पर विचार करने के लिए उस सभा से सिफारिश नहीं की हो।

तथापि, इन सारी बातों से यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि राज्य सभा का वित्त संबंधी मामलों से कुछ भी लेना-देना नहीं है। भारत सरकार के बजट को प्रतिवर्ष राज्य सभा के समक्ष भी रखा जाता है और इसके सदस्यगण उस पर चर्चा करते हैं। यद्यपि राज्य सभा विभिन्न मंत्रालयों की अनुदान मांगों पर मतदान नहीं करती - यह मामला अनन्य रूप से लोक सभा के लिए सुरक्षित है फिर भी, भारत की संचित निधि से किसी धन की निकासी तब तक नहीं की जा सकती, जब तक दोनों सभाओं द्वारा विनियोग विधेयक को पारित नहीं कर दिया जाता। इसी प्रकार, वित्त विधेयक को भी राज्य सभा के समक्ष लाया जाता है। इसके अलावा, विभाग-संबंधित संसदीय स्थायी समितियाँ, जो मंत्रालयों/विभागों की वार्षिक अनुदान मांगों की जांच करती हैं, संयुक्त समितियाँ हैं जिनमें दस सदस्य राज्य सभा से होते हैं।

सभा के नेता

सभापति और उपसभापति के अलावा, सभा का नेता एक अन्य ऐसा अधिकारी है जो सभा के कुशल और सुचारू संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। राज्य सभा में सभा का नेता सामान्यतया प्रधान मंत्री होता है, यदि वह इसका सदस्य है, अथवा कोई ऐसा मंत्री होता है, जो इस सभा का सदस्य है और जिसे उनके द्वारा इस रूप में कार्य करने के लिए नाम-निर्दिष्ट किया गया हो। उसका प्राथमिक उत्तरदायित्व सभा में सौहार्दपूर्ण और सार्थक वाद-विवाद के लिए सभा के सभी वर्गों के बीच समन्वय बनाए रखना है। इस प्रयोजनार्थ, वह न केवल सरकार के, बल्कि विपक्ष, मंत्रियों और पीठासीन अधिकारी के भी निकट संपर्क में रहता है। वह सभा-कक्ष (चैम्बर) में सभापीठ के दायीं ओर की पहली पंक्ति में पहली सीट पर बैठता है ताकि वह परामर्श हेतु पीठासीन अधिकारी को सहज उपलब्ध रहे। नियमों के तहत, सभापति द्वारा सभा में सरकारी कार्य की व्यवस्था, राष्ट्रपति के अभिभाषण पर चर्चा हेतु दिनों के आवंटन अथवा समय के आवंटन, शुक्रवार के अलावा किसी अन्य दिन को गैर-सरकारी सदस्यों के कार्य, अनियत दिन वाले प्रस्तावों पर चर्चा, अल्पकालिक चर्चा और किसी धन विधेयक पर विचार एवं उसे वापस किये जाने के संबंध में सदन के नेता से परामर्श किया जाता है।

महान व्यक्तित्व, राष्ट्रीय नेता अथवा अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठित व्यक्ति की मृत्यु होने की स्थिति में उस दिन के लिए सभा के स्थगन अथवा अन्यथा

के मामले में सभापति उनसे भी परामर्श कर सकते हैं। गठबंधन सरकारों के युग में उनका कार्य और अधिक चुनौतीपूर्ण हो गया है। वह यह सुनिश्चित करते हैं कि सभा के समक्ष लाये गए किसी भी मामले पर सार्थक चर्चा के लिए सभा में हर संभव तथा उचित सुविधा प्रदान की जाए। वह सभा की राय व्यक्त करने और इसे समारोह अथवा औपचारिक अवसरों पर प्रस्तुत करने में सभा के वक्ता के रूप में कार्य करते हैं। निम्नलिखित सदस्य राज्य सभा में सभा के नेता रहे हैं:

	नाम	से	तक
1.	श्री एन. गोपालास्वामी अयंगर	मई, 1952	फरवरी, 1953
2.	श्री चारू चन्द्र बिश्वास	फरवरी, 1953	नवम्बर, 1954
3.	श्री लाल बहादुर शास्त्री	नवम्बर, 1954	मार्च, 1955
4.	पंडित गोविंद बल्लभ पंत	मार्च, 1955	फरवरी, 1961
5.	हाफीज मोहम्मद इब्राहीम	फरवरी, 1961	अगस्त, 1963
6.	श्री यशवन्त राव बलवन्तराव	अगस्त, 1963	दिसम्बर, 1963
7.	श्री जय सुख लाल हाथी	फरवरी, 1964	मार्च, 1964
8.	श्री महोमदाली करीम छागला	मार्च, 1964	नवम्बर, 1967
9.	श्री जय सुख लाल हाथी	नवम्बर, 1967	नवम्बर, 1969
10.	श्री कोडारादास कालीदास शाह	नवम्बर, 1967	मई, 1971
11.	श्री उमा शंकर दीक्षित	मई, 1971	दिसम्बर, 1975
12.	श्री कमलापति त्रिपाठी	दिसम्बर, 1975	मार्च, 1977
13.	श्री लाल कृष्ण आडवाणी	मार्च, 1977	अगस्त, 1979
14.	श्री कृष्ण चन्द्र पंत	अगस्त, 1979	जनवरी, 1980
15.	श्री प्रणव मुखर्जी	जनवरी, 1980 अगस्त, 1981	जुलाई 1981 और दिसम्बर, 1984
16.	श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह	दिसम्बर, 1984	अप्रैल, 1987
17.	श्री नारायण दत्त तिवारी	अप्रैल, 1987	जून, 1988
18.	श्री पी. शिव शंकर	जुलाई, 1988	दिसम्बर, 1989
19.	श्री एम.एस. गुरुपदस्वामी	दिसम्बर, 1989	नवम्बर, 1990
20.	श्री यशवंत सिन्हा	दिसम्बर, 1990	जून, 1991
21.	श्री शंकर राव बलवंत राव चव्हाण	जुलाई, 1991	अप्रैल, 1996
22.	श्री सिकन्दर बख्त	20 मई, 1996	31 मई, 1996
23.	श्री इन्द्र कुमार गुजराल	जून, 1996	नवम्बर, 1996

24.	श्री एच.डी. देवेगौड़ा	नवम्बर, 1996	अप्रैल, 1997
25.	श्री इन्द्र कुमार गुजराल	अप्रैल, 1997	मार्च, 1998
26.	श्री सिकन्दर बख्त	मार्च, 1998	अक्टूबर, 1999
27.	श्री जसवन्त सिंह	अक्टूबर, 1999	मई, 2004
28.	श्री डा. मनमोहन सिंह	01 जून, 2004	18 मई, 2009
		29 मई, 2014	26 मई, 2014
29.	श्री अरुण जेटली	02 जून, 2014	अब तक

विपक्ष के नेता

विधायिका में विपक्ष के नेता के पद का अत्यधिक सार्वजनिक महत्व है। इसका महत्व संसदीय लोकतंत्र में विपक्ष को दी गई मुख्य भूमिका से उद्भूत होता है। विपक्ष के नेता का कार्य वस्तुतः अत्यधिक कठिन है क्योंकि उन्हें आलोचना करनी पड़ती है, गलती इंगित करनी पड़ती है और ऐसे वैकल्पिक प्रस्तावों/नीतियों को प्रस्तुत करना पड़ता है जिन्हें लागू करने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। इस प्रकार उन्हें संसद और देश के प्रति एक विशेष सामाजिक जिम्मेवारी निभानी होती है।

राज्य सभा में वर्ष 1969 तक वास्तविक अर्थ में विपक्ष का कोई नेता नहीं होता था। उस समय तक सर्वाधिक सदस्यों वाली विपक्षी पार्टी के नेता को बिना किसी औपचारिक मान्यता, दर्जा या विशेषाधिकार दिए विपक्षी नेता मानने की प्रथा थी। विपक्ष के नेता के पद को संसद में विपक्षी नेता वेतन और भत्ता अधिनियम, 1977 द्वारा अधिकारिक मान्यता प्रदान की गई। इस अधिनियम के द्वारा राज्य सभा में विपक्षी नेता, राज्य सभा का एक ऐसा सदस्य होता है जो कुछ समय के लिए राज्य सभा के सभापति द्वारा यथा मान्य सबसे अधिक सदस्यों वाले दल की सरकार के विपक्ष में होता है। इस प्रकार विपक्ष के नेता को तीन शर्तें पूरी करनी होती हैं, नामशः (i) उसे सभा का सदस्य होना चाहिए (ii) सर्वाधिक सदस्यों वाले दल की सरकार के विपक्ष में राज्य सभा का नेता होना चाहिए और (iii) इस आशय से राज्य सभा के सभापति द्वारा उसे मान्यता प्राप्त होनी चाहिए।

राज्य सभा में निम्नलिखित सदस्य विपक्ष के नेता रहे हैं:

	नाम	से	तक
1.	श्री श्याम नंदन मिश्र	दिसम्बर, 1969	मार्च, 1971
2.	श्री एम.एस. गुरूपदस्वामी	मार्च, 1971	अप्रैल, 1972
3.	श्री कमलापति त्रिपाठी	30.3.1977	15.2.1978
4.	श्री भोला पासवान शास्त्री	24.2.1978	23.3.1978
5.	श्री कमलापति त्रिपाठी	23.3.1978	2.4.1978 और
		18.4.1978	8.1.1980
6.	श्री लाल कृष्ण आडवाणी	21.1.1980	7.4.1980

7.	श्री पी. शिव शंकर	18.12.1989	2.1.1991	
8.	श्री एम.एस. गुरुपदस्वामी	28.6.1991	21.7.1991	
9.	श्री एस. जयपाल रेड्डी	22.7.1991	29.6.1992	
10.	श्री सिकन्दर बख्त	7.7.1992 10.4.1996	10.4.1996 23.5.1996	और
11.	श्री शंकर राव बलवन्त राव चव्हाण	23.5.1996	1.6.1996	
12.	श्री सिकन्दर बख्त	1.6.1996	19.3.1998	
13.	डा. मनमोहन सिंह	21.3.1998	21.5.2004	
14.	श्री जसवन्त सिंह	3.6.2004 5.7.2004	4.7.2004 और 16.5.2009	
15.	श्री अरुण जेटली	3.6.2009	26.5.2014	
16.	श्री गुलाम नबी आज़ाद	8.6.2014	11.02.2015	
		16.02.2015	अब तक	

हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में राज्य सभा ने रचनात्मक और प्रभावी भूमिका निभाई है। विधायी क्षेत्र और सरकारी नीतियों को प्रभावित करने के मामले में इसका कार्य-निष्पादन काफी अहम रहा है। वस्तुतः राज्य सभा ने संवैधानिक व्यवस्था के मुताबिक लोक सभा के साथ सहयोग की भावना से कार्य किया है। राज्य सभा ने जल्दबाजी में कानून पारित नहीं किया है और संघीय सिद्धांत का प्रतिनिधित्व करते हुए एक आदर्श सभा की तरह कार्य किया है। संघीय सभा होने के नाते इसने देश की एकता और अखंडता को बनाए रखने का कार्य किया है और संसदीय लोकतंत्र में लोगों की आस्था बढ़ाई है।